हरि नंदन प्रसाद और अन्य
बनाम
कर्मचारी एल/आर एफसीआई प्रबंधन और अन्य
(सीविल अपील संख्या 2014 का 2417-2418)

फरवरी 17,2014

[के.एस राधाकृष्णन और ए.के सिकरी, न्यायमूर्ति]

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947

अनुभाग:-25-एफ-नोटिस या छंटनी मुआवजे के बदले में किसी भी नोटिस या वेतन के बिना समाप्ति-बर्खास्त श्रमिकों ने अपने विघटन/समाप्ति से पहले लगातार 240 दिनों से अधिक समय तक काम किया-आयोजितः अनुभाग.25 एफ के अनुसार बकाया का भुगतान करने में छंटनी की अनिवार्य पूर्व शर्त का अनुपालन नहीं किया गया है, जो कि समाप्ति को अवैध के रूप में प्रस्तुत करने के लिए पर्याप्त है।

अनुभाग.25-F-बहाली-हकदारी-आयोजितः उन व्यक्तियों को बहाली की राहत नहीं दी जा सकती है जो दैनिक मजदूरी के रूप में लगे हुए थे और जिनकी सेवाओं को दूर के अतीत में समाप्त कर दिया गया था और जहां समाप्ति अधिनियम अनुभाग.25-एफ के प्रावधानों का पालन नहीं करने के तकनीकी आधार पर अवैध माना गया था ।

श्रम न्यायालय/औद्योगिक न्यायनिर्णायक की शक्ति-आयोजितः औद्योगिक विवाद अधिनियम के तहत औद्योगिक न्यायनिर्णायक की शक्तियां व्यापक हैं-अधिनियम के तहत न्यायनिर्णायक अधिकारियों को अधिकार देकर, गलत तरीके से बर्खास्त या छुट्टी दिए गए श्रमिकों की बहाली जैसे राहत देने के लिए, जो सामान्य कानून में अनुमत नहीं हो सकते हैं या नियोक्ता और ऐसे श्रमिकों के बीच अनुबंध की शर्तों के तहत उचित नहीं हो सकते हैं, विधायिका ने अनुचित श्रम प्रथाओं को विफल करने और औद्योगिक शांति के मार्ग के रूप में सामूहिक सौदेबाजी की नीति को सुरक्षित करने का प्रयास किया है-उक्त उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए, श्रम न्यायालयों/औद्योगिक न्यायाधिकरणों को न केवल अधिकारों को लागू करने के लिए बल्कि सामाजिक न्याय प्राप्त करने

के अंतर्निहित उद्देश्य के साथ नए अधिकार बनाने के लिए भी व्यापक शक्तियां दी गई हैं - न्यायाधिकरण को प्रदत्त उक्त व्यापक शक्ति बेलगाम नहीं है - इस प्रकार, यह एक अच्छा संतुलन है जिसे किसी विशेष विवाद का निर्णय लेते समय प्राप्त करने की आवश्यकता होती है, यह ध्यान में रखते हुए कि औद्योगिक विवादों का निपटारा निष्पक्षता और न्याय के सिद्धांत पर औद्योगिक निर्णय द्वारा किया जाता है।

दैनिक वेतनभोगियों का नियमितीकरण-दावा के लिए-आयोजितः जब पद उपलब्ध हों, तो किसी अनुचित श्रम प्रथा के अभाव में श्रम न्यायालय नियमितीकरण के लिए केवल इसलिए निर्देश नहीं देगा क्योंकि एक श्रमिक कई वर्षों से दैनिक वेतनभोगी श्रमिक-अस्थायी कार्यकर्ता के रूप में बना हुआ है-इसके अलावा, यदि कोई पद उपलब्ध नहीं हैं, तो नियमितीकरण के लिए ऐसा निर्देश अस्वीकार्य होगा। - इन परिस्थितियों में ऐसे व्यक्ति को नियमित करने का निर्देश देना, केवल दैनिक मजदूरी आदि के रूप में ऐसे श्रमिक द्वारा लगाए गए वर्षों की संख्या के आधार पर। यह सेवा में पिछले दरवाजे से प्रवेश के बराबर हो सकता है जो कला के लिए अभिशाप है। संविधान की धारा 14-इसके अलावा, ऐसा निर्देश तब नहीं दिया जाएगा जब संबंधित कर्मचारी भर्ती नियमों के अनुसार संबंधित पद की पात्रता आवश्यकता को पूरा नहीं करता है-हालांकि, जहां भी यह पाया जाता है कि समान रूप से स्थित श्रमिकों को नियोक्ता द्वारा स्वयं किसी योजना के तहत या अन्यथा नियमित किया जाता है और जिन श्रमिकों ने औद्योगिक/श्रम न्यायालय का दरवाजा खटखटाया है, वे उनके बराबर हैं, ऐसे मामलों में नियमितीकरण का निर्देश कानूनी रूप से उचित हो सकता है, अन्यथा, छूटे हुए श्रमिकों का गैर-नियमितीकरण स्वयं ऐसे मामलों में उनके साथ भेदभाव करने के बराबर होगा और यह कला का उल्लंघन होगा।

संविधान का 14-भारत का संविधान, 1950-अनुच्छेद 14।

दैनिक मजदूरों की समाप्ति-नियोक्ता द्वारा जारी परिपत्र जिसके तहत 90 दिनों से अधिक समय तक कार्यरत कोई भी अस्थायी कर्मचारी अपनी सेवा को नियमित करने का हकदार था और उक्त परिपत्र का पालन करते हुए, कंपनी ने इसी तरह स्थित 70-75 आकस्मिक श्रमिकों की सेवाओं को नियमित कर दिया था - अपीलार्थियों-दैनिक वेतनभोगियों द्वारा नियमितीकरण का दावा-आयोजितः तत्काल एक मामला, अपीलार्थी सं: 1 उस परिपत्र से 4 वर्ष पूर्व, उस तारीख को सेवा में नहीं था जब योजना प्रख्यापित की गई थी क्योंकि उसकी सेवाएं समाप्त कर दी गई थीं-इसलिए, बहाली के बदले मौद्रिक मुआवजे की राहत उसके मामले में अधिक उपयुक्त होगी-हालांकि, जहां तक अपीलार्थी सं: 1 सेवा में नहीं था। 2 का संबंध था, जब परिपत्र जारी किया गया था, वह सेवा में था और उस परिपत्र के जारी होने के कुछ महीनों के भीतर उसने 240 दिनों की सेवा पूरी कर ली

थी - अपीलार्थी संख्या. 2 का गैर-नियमितकरण, उस परिपत्र का लाभ अन्य समान स्थित कर्मचारियों को देते हुए और उन्हें नियमित करना, इसलिए, स्पष्ट रूप से भेदभावपूर्ण होगा।

अपीलार्थी नं. 1 स्थिति की आवश्यकता में दैनिक मजदूरी पर लगा हुआ था। उन्हें इस आधार पर 3 साल के बाद सेवा से बर्खास्त कर दिया गया था कि उनकी सेवाओं की अब आवश्यकता नहीं थी। उन्हें वेतन या छंटनी मुआवजे का कोई नोटिस या नोटिस नहीं दिया गया था। अपीलार्थी नं. 2 अनौपचारिक टाइपिस्ट के रूप में दैनिक मजदूरी पर लगा हुआ था। उन्हें 4 साल बाद बर्खास्त कर दिया गया था दोनों अपीलार्थियों ने औद्योगिक विवाद उठाया। औद्योगिक अधिकरण ने दोनों मामलों में अभिनिर्धारित किया कि समाप्ति औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 25-एफ का उल्लंघन है और समाप्ति की तारीख से सेवाओं की बहाली और नियमितता तथा 50% मजदूरी वापस करने का आदेश दिया। नियमितीकरण का निर्देश परिपत्र दिनांक 6.5.1987 पर आधारित था प्रत्यर्थी द्वारा जारी किया गया जिसके तहत 90 दिनों से अधिक के लिए नियोजित कोई भी अस्थायी कर्मचारी अपनी सेवा के नियमितीकरण का हकदार था और उक्त परिपत्र का पालन करते हुए, कंपनी ने 70-75 समान रूप से स्थित आकस्मिक श्रमिकों की सेवाओं को नियमित किया था। उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने जी को प्रतिवादी कंपनी द्वारा दायर रिट याचिकाओं को खारिज कर दिया। उच्च न्यायालय की खंड पीठ ने प्रत्यर्थी की अपील को यह कहते हुए स्वीकार कर लिया कि चूंकि दोनों अपीलार्थियों ने 10 या अधिक वर्षों की सेवा नहीं दी है, इसलिए उनका मामला उमा देवी के मामले में बनाए गए अपवाद में भी नहीं आया है। डिवीजन बेंच ने स्वीकार किया कि औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 25-एफ का उल्लंघन किया गया था, हालांकि इसने कहा कि अपीलार्थी इस कारण से बहाली के हकदार नहीं थे कि उन्हें बिना किसी शर्त या वादे के अस्थायी श्रमिकों के रूप में सख्ती से नियुक्त किया गया था कि उन्हें स्थायी बनाया जाएगा और इसलिए, ऐसे श्रमिकों की बहाली वारंट नहीं थी और वे केवल मौद्रिक मुआवजा प्राप्त करने के हकदार थे। मुआवजे के संबंध में, उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि चूंकि दोनों अपीलार्थियों को अधिनियम की धारा 17-8 के अधीन रिट याचिकाओं के लंबित होने के वर्षों की संख्या के लिए अंतिम रूप से प्राप्त मजदूरी के समतुल्य धन का भुगतान किया गया था, इसलिए उन्हें विधिवत मुआवजा दिया गया था और आगे कोई राशि देय नहीं थी।

तत्काल अपीलों में, विचार के लिए प्रश्न थेः क्या अपीलार्थियों की सेवाओं की समाप्ति अवैध थी; यदि हाँ, मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, अपीलार्थी सेवा की बहाली के हकदार होंगे या क्या

बहाली के बदले मौद्रिक मुआवजा उचित होगा; और क्या अपीलार्थी अपनी सेवाओं को नियमित करने के हकदार थे। आंशिक रूप से अपीलों को अनुमति देते हुए, न्यायालय ने

माना: 1. स्वीकार किए गए तथ्य यह हैं कि दोनों अपीलार्थी ने अपने विघटन/समाप्ति से पहले लगातार 240 दिनों से अधिक समय तक काम किया था। उनके विघटन के समय, जब उनके पास 240 दिनों से अधिक (वास्तव में लगभग 3 वर्ष) के लिए निरंतर सेवा थी, तो उन्हें नोटिस के साथ-साथ छंटनी मुआवजे के बदले में कोई नोटिस या भुगतान नहीं दिया गया था। इस प्रकार, I.D की धारा 25-F के अनुसार उक्त बकाया का भुगतान करने में छंटनी की अनिवार्य पूर्व शर्त। अधिनियम का पालन नहीं किया गया। यह समाप्ति को अवैध बनाने के लिए पर्याप्त है। यहां तक कि विवादित मुकदमे में उच्च न्यायालय ने भी इस स्थिति को सही ढंग से स्वीकार किया। यह देखना होगा कि ऐसे मामलों में क्या राहत दी जानी चाहिए। मान लीजिए, दोनों मजदूर दैनिक मजदूरी के आधार पर काम करते थे। उनका जुड़ाव भी स्थिति की अनिवार्यता में था। अपीलार्थी नं. 1 को वर्ष 1983 में हटा दिया गया था। उनके मामले में विवाद को 1992 में ही न्यायिक निर्णय के लिए औद्योगिक न्यायाधिकरण को भेजा गया था। 9 साल का समय अंतराल था। हालांकि इस तरह की असामान्य देरी के लिए कोई कारण नहीं दिया गया था, लेकिन ऐसा लगता है कि उन्होंने अपने विघटन के कुछ वर्षों बाद औद्योगिक विवाद को उठाया था, जिसका औद्योगिक न्यायाधिकरण के निर्णय को पढ़ने से अनुमान लगाया जा सकता है क्योंकि इससे पता चलता है कि उनके विघटन के बाद वह केवल अभ्यावेदन देता रहा और उसने न्यायिक कार्यवाही का सहारा 6.5.1997 के परिपत्र के जारी होने के बाद ही लिया, जिसके अनुसार प्रतिवादी ने उन सभी आकस्मिक श्रमिकों की सेवाओं को नियमित करने का निर्णय लिया था, जिन्होंने 1996 से पहले 90 दिनों से अधिक समय पूरा कर लिया था। अपीलार्थी नं. 1 ने मुश्किल से 3 वर्षों के लिए दैनिक मजदूरी के आधार पर काम किया था और वह पिछले 30 वर्षों से सेवा से बाहर था। यहां तक कि जब न्यायाधिकरण ने 1996 में उनका फैसला सुनाया, तब भी उनकी बर्खास्तगी को 13 साल बीत चुके थे। इन तथ्यों पर, जिन व्यक्तियों को नियुक्त किया गया था, उन्हें बहाली की राहत देना मुश्किल होगा।दैनिक वेतनभोगी और ई के रूप में जिनकी सेवाओं को दूर के अतीत में समाप्त कर दिया गया था। और, आगे जहां समाप्ति को केवल अधिनियम की धारा 25-एफ के प्रावधानों का पालन नहीं करने के तकनीकी आधार पर अवैध माना जाता है|
[पैरा 16 और 17) [971-जी -एच ; 972-एफ -ए -जी]

बीएसएनएल बनाम भुरुमल 2013 (15) स्केल 131 · पर भरोसा किया गया।

2. U.P. पावर कॉरपोरेशन और भोंडे मामले की एक करीबी जांच से पता चला कि कानून निर्धारित किया गया था उन मामलों में जो एक-दूसरे के विरोधी नहीं थे। U.P. पावर कॉर्पोरेशन में, न्यायालय ने श्रम न्यायालय की शक्तियों को मान्यता दी और साथ ही इस बात पर जोर दिया कि इस बात पर जोर दिया कि श्रम न्यायालय को यह ध्यान रखना चाहिए कि यदि यह संविधान के अनुच्छेद 14 के प्रावधानों का उल्लंघन करता है तो नियमितीकरण का कोई निर्देश नहीं होना चाहिए, जिस पर उमादेवी में निर्णय मुख्य रूप से स्थापित है।। दूसरी ओर, भोंडे मामले में, न्यायालय ने इस सिद्धांत को मान्यता दी है कि कामगारों को कुछ राहत प्रदान करने के लिए श्रम न्यायालय/औद्योगिक न्यायालय को प्रदत्त वैधानिक शक्तियों को ध्यान में रखते हुए, जिसमें अनुबंध कर्मचारियों को स्थायी का दर्जा देने की राहत शामिल है, ऐसी वैधानिक शक्ति उमादेवी के मामले में निर्णय से वंचित नहीं होती है। इस निर्णय के पढ़ने से यह स्पष्ट है कि इस तरह की शक्ति का प्रयोग तब किया जाना है जब नियोक्ता उपलब्ध होने पर भी स्थायी पद को नहीं भरकर और अस्थायी/दैनिक मजदूरी के आधार पर श्रमिकों को नियुक्त करना जारी रखते हुए और उनसे वही काम लेना जारी रखते हुए अनुचित श्रम व्यवहार में लिप्त हो गया है जो नियमित श्रमिकों द्वारा किया गया था, लेकिन उन्हें बहुत कम मजदूरी का भुगतान करना था। यह तभी होता है जब एक विशेष अभ्यास पाया जाता है!जैसा कि एम. आर. टी. पी. और पी. यू. एल. पी. अधिनियम की अनुसूची IV में प्रगणित है और यह आवश्यक करता है कि उक्त अधिनियम की धारा 30 के अधीन निर्देश दिया जाए कि न्यायालय ऐसा निर्देश देगा।
[पैरा 29) [984-एच; 985-ई ए-ई]

उत्तर प्रदेश बिजली निगम बनाम बिजली मजदूर संघ और अन्य। **(2007) 5 SCC 755:2007 (5) SCR 256**; महाराष्ट्र राज्य बनाम आर.एस.भोंडे **(2005) 6 एस. सी. सी. 751:2005 (2) पूरक एससीआर 763**; सचिव, कर्नाटक राज्य बनाम उमा देवी और अन्य। {~06) 4 एससीसी 1:**2006 (3) एससीआर 953**; महाराष्ट्र राज्य सड़क परिवहन निगम और अन्य बनाम कास्टेरिबे राज्य परिवहन कर्मचारी संगठन **(2009) 8 एससीसी 556-पर निर्भर**|

3. भोंडे मामले में निर्णय एम. आर. टी. पी. और पी. यू. एल. पी. अधिनियम के तहत दिया गया था और उक्त अधिनियम द्वारा औद्योगिक न्यायाधिकरण/श्रम न्यायालय को प्रदत्त शक्तियों का पता लगाने के लिए उस अधिनियम के विशिष्ट प्रावधानों पर विचार किया गया था। साथ ही, औद्योगिक विवाद अधिनियम के तहत औद्योगिक न्यायनिर्णायक की शक्तियां समान रूप से व्यापक हैं। यह अधिनियम औद्योगिक विवादों से संबंधित है, सुलह, निर्णय और निपटान का प्रावधान करता है, और पक्षों के अधिकारों और पुरस्कारों और निपटान के प्रवर्तन को नियंत्रित करता है। इस प्रकार, अधिनियम के तहत न्यायनिर्णायक अधिकारियों को अधिकार देकर, गलत तरीके से बर्खास्त या छुट्टी दिए गए श्रमिकों की बहाली जैसे राहत देने के लिए, जो सामान्य

कानून में अनुमत नहीं हो सकते हैं या नियोक्ता और ऐसे श्रमिकों के बीच अनुबंध की शर्तों के तहत उचित नहीं हो सकते हैं, विधायिका ने अनुचित श्रम प्रथाओं को विफल करने और औद्योगिक शांति के मार्ग के रूप में सामूहिक सौदेबाजी की नीति को सुरक्षित करने का प्रयास किया है। उक्त उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए, श्रम न्यायालयों/औद्योगिक न्यायाधिकरणों को न केवल अधिकारों को लागू करने के लिए बल्कि सामाजिक न्याय प्राप्त करने के अंतर्निहित उद्देश्य के साथ नए अधिकार बनाने के लिए भी व्यापक शक्तियां दी गई हैं। अधिकरण को प्रदत्त उपर्युक्त व्यापक शक्ति बेलगाम नहीं है। इस प्रकार, यह अच्छा संतुलन है जिसे किसी विशेष विवाद का निर्णय लेते समय प्राप्त करने की आवश्यकता होती है, यह ध्यान में रखते हुए कि औद्योगिक विवादों का निपटारा निष्पक्षता और न्याय के सिद्धांत पर औद्योगिक निर्णय द्वारा किया जाता है। उक्त दो निर्णयों के सामंजस्यपूर्ण अध्ययन से पता चला कि जब पद उपलब्ध होते हैं, तो किसी भी अनुचित श्रम अभ्यास के अभाव में श्रम न्यायालय नियमित करने के लिए केवल इसलिए निर्देश नहीं देगा क्योंकि एक श्रमिक कई वर्षों से दैनिक मजदूरी कार्यकर्ता/एडहॉक/अस्थायी कार्यकर्ता के रूप में बना हुआ है| इसके अलावा, यदि कोई पद उपलब्ध नहीं हैं, तो नियमित करने के लिए इस तरह का निर्देश अस्वीकार्य होगा। इन परिस्थितियों में ऐसे व्यक्ति को नियमित करने का निर्देश देना, केवल ऐसे श्रमिक द्वारा दैनिक मजदूरी आदि के रूप में लगाए गए वर्षों की संख्या के आधार पर, सेवा में पिछले दरवाजे से प्रवेश के बराबर हो सकता है जो संविधान के अनुच्छेद 14 के लिए एक अभिशाप है। इसके अलावा, इस तरह का निर्देश तब नहीं दिया जाएगा जब संबंधित कर्मचारी भर्ती नियमों के अनुसार पद की पात्रता आवश्यकता को पूरा नहीं करता है। तथापि, जहां कहीं यह पाया जाता है कि समान रूप से स्थित कामगारों को नियोक्ता द्वारा स्वयं किसी योजना के अधीन या अन्यथा नियमित किया जाता है और प्रश्नगत कामगार जिन्होंने औद्योगिक/श्रम न्यायालय का दरवाजा खटखटाया है, उनके बराबर हैं, ऐसे मामलों में नियमितीकरण का निर्देश कानूनी रूप से न्यायोचित हो सकता है, अन्यथा, बचे हुए कामगारों का गैर-नियमितीकरण स्वयं ऐसे मामलों में उनके साथ अनुचित भेदभाव के बराबर होगा और यह संविधान के अनुच्छेद. 14 का उल्लंघन होगा। इस प्रकार, औद्योगिक न्यायनिर्णायक इस संवैधानिक प्रावधान का उल्लंघन करने के बजाय अनुच्छेद 14 को बरकरार रखते हुए समानता प्राप्त करेगा।
[पैरा 30 से 34][985-एफ -एच ; 986-ए , डी-इ ; 987-ए , डी -H; 988-ए -बी]

भारत बैंक लिमिटेड बनाम भारत बैंक लिमिटेड के कर्मचारी **[1950] एल एल जे 921,948-49 (SC)** न्यू मानेकचौक स्पिनिंग एंड वीविंग को लिमिटेड बनाम टेक्सटाइल लेबर एसोसिएशन **[1961] 1 एलएलजे 521,526 (एससी)-पर निर्भर।**

4. अपीलार्थी संख्या 1 उस तारीख को सेवा में नहीं था जब योजना को प्रख्यापित किया गया था अर्थात जहां तक 6.5.1987 का संबंध है, क्योंकि उस परिपत्र के प्रकाश में आने से 4 वर्ष पूर्व उनकी सेवाएं समाप्त कर दी गई थीं। इसलिए, बहाली के बदले मौद्रिक मुआवजे की राहत उसके मामले में अधिक उपयुक्त होगी और उसके खिलाफ विवादित निर्णय में विभिन्न कारणों से निष्कर्ष उपलब्ध

नहीं है, तथापि, जहां तक अपीलार्थी सं. 2 का संबंध है, वह 5.9.1986 को नियुक्त था और 15.9.1990 तक जारी रहा जब उसकी सेवाएं समाप्त कर दी गईं। इसके तुरंत बाद उन्होंने औद्योगिक विवाद को भी उठाया। इस प्रकार, जब परिपत्र जारी किया गया था, वह सेवा में था और उस परिपत्र के जारी होने के कुछ महीनों के भीतर उसने 240 दिनों की सेवा पूरी कर ली थी। अपीलार्थी संख्या. 2 का गैर-नियमितीकरण, उस परिपत्र दिनांक 6.5.1987 का लाभ अन्य समरूप स्थित कर्मचारियों को देते हुए और उन्हें नियमितीकरण, इसलिए, स्पष्ट रूप से भेदभावपूर्ण होगा। इन तथ्यों पर, सीजीआईटी ने उचित रूप से अभिनिर्धारित किया कि वह परिपत्र दिनांक 6.5.1987 में अंतर्विष्ट स्कीम के लाभ का हकदार था। खंड पीठ आक्षेपित निर्णय में इस प्रासंगिक और भौतिक तथ्य पर ध्यान देने में विफल रही है जो अपीलार्थी सं. 2 के पक्ष में है। उच्च न्यायालय ने सीजीआईटी द्वारा दिए गए निर्देश को उलटने में त्रुटि की, जिसे एकल न्यायाधीश द्वारा भी उचित रूप से पुष्टि की गई थी, अपीलार्थी संख्या 2 को 50% पिछले वेतन के साथ बहाल करने और उसे सेवा में नियमित करने के लिए। वह उस परिपत्र के संदर्भ में अपने मामले पर विचार करने का हकदार था। अगर ऐसा किया जाता तो शायद उन्हें नियमित कर दिया जाता। इसके बजाय, वर्ष 1990 में उनकी सेवाओं को गलत तरीके से और अवैध रूप से समाप्त कर दिया गया। अपीलार्थी सं. 1 की अपील को खारिज करते समय, जहां तक अपीलार्थी सं. 2 का संबंध है, वही स्वीकार किया जाता है। उनके मामले में, डिवीजन बेंच के फैसले को दरकिनार कर दिया जाता है और सीजीआईटी के फैसले को बहाल कर दिया जाता है।
[पारा 37,38] [988-ई-सी एच; 989-ए-डी]

दिल्ली विकास बागवानी कर्मचारी संघ बनाम दिल्ली प्रशासन ए.आई.आर. **1992 एससी 789:1992 (1) एससीआर 565**; सहायक अभियंता, राजस्थान विकास निगम और अन्य बनाम गीतम सिंह **(2013) 5 एससीसी 136:2013 (1) एससीआर 679**; डॉक्टर महात्मा फुले कृषि विश्वविद्यालय बनाम नासिक जिला सेठ कामगार संघ **(2001) 7 एससीसी 346:2001 (3) एससीआर 1089-संदर्भित।**

केस लॉ सन्दर्भ

1992 (1) एससीआर 565 पैरा 8 को संदर्भित
2006(3) एससीआर 953 पैरा 8 पर आधारित
2007 (5) एससीआर 256 पैरा 11 पर निर्भर
(2009) 8 एस सी सी 556 पैरा 13 पर आधारित
2013(1) एससीआर 679 पैरा 14 पर आधारित
2013(15) स्केल 13 पैरा 17 पर आधारित
2001(3) एससीआर 1089 पैरा 26 को संदर्भित
2005(2) पूरक एससीआर 763 पैरा 26 को संदर्भित
[1950] एलएलजे 921,948-49 (SC) पैरा 31 पर निर्भर ·

[1961] 1 एलएलजे 521,526 (SC) पैरा 32 पर निर्भर

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सीविल अपील संख्या 2014 का 2417-2418

2005 की संख्या 482 और 483 में एलपीए में रांची में झारखंड उच्च न्यायालय के दिनांक 27.06.2008 के निर्णय और आदेश से|

अपीलार्थियों की ओर से लक्ष्मी रमन सिंह। उत्तरदाताओं के लिए अजीत पुडुसरी, जोआन पुडुसरी।

न्यायालय का निर्णय दिया गया था

<u>ए के सिकरी, जस्टिस.</u>

1. अनुमति दी गई।

2. दोनों अपीलकर्ताओं ने एक संयुक्त विशेष अनुमति याचिका दायर की है, जो झारखंड उच्च न्यायालय की डिवीजन बेंच द्वारा दो एलपीए में पारित दिनांक 27.6.2008 के एक सामान्य निर्णय से उत्पन्न होती है, जिसे प्रतिवादी (जो की भारतीय खाद्य निगम (एफसीआई)है) द्वारा यहां दायर किया गया था । दोनों अपीलकर्ता एफसीआई के साथ आकस्मिक आधार पर काम कर रहे थे। निश्चित समय के बाद, उनकी सेवाएं समाप्त कर दी गईं। उन दोनों ने गलत तरीके से समाप्ति का आरोप लगाते हुए औद्योगिक विवाद उठाया, जिसे केंद्र सरकार-सह-औद्योगिक न्यायाधिकरण (सी. जी. आई. टी.) को भेजा गया था। ये कार्यवाही दो निर्णय में "क्रमशः दिनांक 12.12.1996 एवं 18.12.1996 को सी. जी. आई. टी. द्वारा समाप्त की गई। इन दोनों निर्याणों में, दोनों अपीलकर्ताओं की समाप्ति को अवैध माना गया था और

उन्हें 50 प्रतिशत मजदूरी के साथ बहाल करने का निर्देश दिया गया था। सी. जी. आई. टी. ने सेवा में उन्हें नियमित करने का भी आदेश दिया। एफसीआई (FCI) ने इन दोनों निर्णय को चुनौती देने वाले दोनों मामलों में रिट याचिकाएं दायर कीं, जिन्हें शुरू में वर्ष 1988 में किसी समय स्वीकार किया गया था और दोनों निर्णय के संचालन पर रोक लगा दी गई थी। हालांकि, औद्योगिक विवाद अधिनियम (आई. डी. अधिनियम) की धारा 17-बी के तहत आदेश पारित किए गए थे प्रत्येक मामले में निर्णय की तारीख से अपीलकर्ताओं को अंतिम मजदूरी के रूप में पूर्ण मजदूरी के भुगतान का निर्देश दिया गया। इन रिट याचिकाओं को अंततः विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा सामान्य निर्णय और दिनांक 19.5.2005 के आदेश के माध्यम से खारिज कर दिया गया था। जैसा कि ऊपर बताया गया है, विद्वान एकल न्यायाधीश के इस फैसले को एफसीआई ने एलपीए दाखिल करके चुनौती दी थी। इन एलपीए को डिवीजन बेंच द्वारा अनुमति दी गई है, जिससे विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेशों के साथ-साथ सी.जी.आई.टी. द्वारा पारित पुरस्कारों को रद्द कर दिया गया है। इस तरह से इस अपील में दो अपीलकर्ता हमारे सामने हैं।

3. इससे पहले कि हम आगे बढ़ें, हम प्रत्येक अपीलार्थी के रोजगार की प्रकृति के विवरण के साथ-साथ एफसीआई और कार्यकाल आदि का व्योरा देना उचित समझते है और न्यायाधिकरण के निर्णयों का सार देना उचित समझते हैं

<u>हरि नंदन</u>

4. "उन्हें 1 जून 1980 को डिपो प्रभारी, एफसीआई, जसीडीह द्वारा खाद्य भंडारण डिपो, जसीडीह में दैनिक मजदूरी के आधार पर, आपात की स्थिति में मजदूर-सह-कर्मचारी के रूप में नियुक्त

किया गया था। इस आधार पर कि अपीलकर्ता संख्या 1 की सेवाओं की अब आवश्यकता नहीं थी, उन्हें 01.03.1983 से हटा दिया गया था। ऐसा करते समय, उन्हें कोई नोटिस या नोटिस वेतन या छंटनी मुआवजा नहीं दिया गया था। अपीलकर्ता संख्या 1 ने औद्योगिक विवाद उठाया जिसे केंद्र सरकार द्वारा 1.10.1992 के संदर्भ आदेश के तहत निम्नलिखित संदर्भ शर्तों के साथ CGIT को भेजा गया था:

> "क्या भारतीय खाद्य निगम के प्रबंधन की कार्रवाई में, श्री हरि नंदन प्रसाद की छंटनी में, एक्स-कैजुअल वर्कमैन, I.D. Act,1947 की धारा 25-एफ के उल्लंघन में, और पूर्ण वेतन के साथ बहाली से इनकार करना और उनकी सेवा को नियमित करना कानूनी और उचित है? यदि नहीं, तो संबंधित कर्मचारी किस राहत का हकदार है?"

5. सी. जी. आई. टी. ने अपना निर्णय दिनांक 12.12.1996 यह मानते हुए दिया कि बर्खास्त करना औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 25-एफ का उल्लंघन था। सी. जी. आई. टी. ने भी अपीलकर्ता नंबर 1 की बहाली का आदेश देते हुए कहा कि वह भी नियमितीकरण के हकदार ये तब से था जब से उन्हें सेवाओं से निष्काशित दिनांक 01.03.1983 से किया गया था। 50 प्रतिशत की सीमा तक पिछला वेतन प्रदान किया गया था। जहां तक नियमितीकरण के निर्देश का संबंध है, यह एफसीआई द्वारा जारी परिपत्र पर आधारित था, जिसमें 90 दिनों से अधिक समय तक कार्यरत कोई भी अस्थायी कार्यकर्ता अपनी सेवा के नियमितीकरण का हकदार था। यह ध्यान दिया गया कि उक्त परिपत्र के अनुसार प्रबंधन ने समान रूप से स्थित आकस्मिक श्रमिकों की सेवाओं को नियमित कर दिया था और

इसलिए अपीलकर्ता नंबर 1 को समान लाभ से इनकार करना भेदभाव के बराबर था।

<u>गोविंद कुमार चौधरी</u>

6. अपीलकर्ता नंबर 2 जिला कार्यालय, एफसीआई, दरभंगा में तृतीय श्रेणी के पद की रिक्ति 05.09.1986 के खिलाफ आकस्मिक टाइपिस्ट के रूप में दैनिक मजदूरी पर लगा हुआ था। उन्होंने 15.09.1990 तक क्षमता में काम किया जब तक कि उनका नाम रोल से हटा नहीं दिया गया। उन्होंने औद्योगिक विवाद भी उठाया जिसे निम्नलिखित संदर्भ शर्तों के साथ सी. जी. आई. टी. को संदर्भित किया गया थाः

> ""क्या प्रबंधन की कार्रवाई जायज और क़ानूनी है जिसमें भारतीय खाद्य निगम, लहेरीसराय, दरभंगा ने छंटनी में श्री गोविंद कुमार चौधरी को निकाला, जो की कैजुअल टाइपिस्ट के रूप में मनमाने ढंग से I.D. Act की धारा 25-एफ का उल्लंघन में काम कर रहा था, और पूर्ण बकाया वेतन के साथ बहाली से इनकार करना और सेवा को नियमित करना कानूनी और न्याय हित है? यदि नहीं तो कर्मकार इससे संबंधितों किन राहतों के हकदार है?"

उनके मामले में, सी. जी. आई. टी. के आदेश 18.12.1996 द्वारा लगभग समान आधार पर, जैसा कि अपीलकर्ता नंबर 1 के मामले में, इसी तरह के कारणों से समर्थित किया गया था।

7. विद्वान एकल न्यायाधीश ने एफसीआई द्वारा दायर दोनों रिट याचिकाओं को खारिज करते हुए सीजीआईटी द्वारा दिए गए निष्कर्षों और कारणों से सहमति व्यक्त की।

8. डिवीजन बेंच के समक्ष एलपीए में, एफसीआई का प्राथमिक तर्क यह था कि दोनों श्रमिकों के स्वीकार किए गए मामलों में सेवाओं को नियमित करने का कोई निर्देश केवल इस आधार पर कि उन्होंने एक कैलेंडर वर्ष में 240 दिनों से अधिक समय तक आकस्मिक कर्मचारियों के रूप में काम किया था, नहीं दिया जा सकता था। यह भी प्रस्तुत किया गया कि एफसीआई के जिला प्रबंधक को अस्थायी श्रमिकों के रूप में व्यक्तियों को नियुक्त करने के लिए अधिकृत किया गया था, ऐसा अधिकार उन्हें केवल 7 दिनों के लिए नियुक्त करने के लिए दिया गया था और इससे अधिक नहीं, और एफसीआई द्वारा जारी परिपत्र में निहित इस सख्त शर्त के उल्लंघन के मामले में, संबंधित अधिकारी के खिलाफ विभागीय रूप से कार्रवाई की जा सकती है।

आगे तर्क दिया गया था कि भले ही इस तरह के अस्थायी रोजगार को 7 दिनों की निर्धारित अवधि से आगे जारी रखा गया, चूंकि इन दोनों श्रमिकों ने दैनिक मजदूरी के आधार पर काम किया था, वह भी लगभग 3 साल की अवधि के लिए, दिल्ली विकास बागवानी कर्मचारी संघ बनाम दिल्ली प्रशासन एआईआर 1992 एससी 789 के मामले में दिये गये फ़ैसले और **सचिव, कर्नाटक राज्य बनाम उमा देवी और अन्य** (2006) 4 एससीसी 1. के मामले में संविधान पीठ के फैसले, इन दोनों फैसलों को देखते हुए इन श्रमिकों का कोई नियमितीकरण नहीं हो सकता था, इन दलीलों ने उच्च न्यायालय की डिवीजन बेंच को प्रभावित किया है, और निम्नलिखित कारणों को देते हुए इसे स्वीकार किया हैः

"ट्रिब्यूनल ने स्पष्ट रूप से इस संदर्भ में निर्धारित कानून के सिद्धांतों को गलत समझा है। दिल्ली विकास बागवानी कर्मचारी संघ बनाम दिल्ली प्रशासन (एआईआर 1992) के मामले में

एससी 789) सुप्रीम कोर्ट ने स्पष्ट रूप से कहा है कि अस्थायी कर्मचारी, भले ही उन्होंने 240 दिनों से अधिक समय तक काम किया हो, अपनी सेवाओं के स्वचालित नियमितीकरण के लिए किसी भी अधिकार या लाभ का दावा नहीं कर सकते हैं। इसी तरह का विचार पोस्ट मास्टर जनरल, कोलकाता & अन्य बनाम टूटू दास (दत्ता) 2007 (5) एससीसी 317 के मामले में लिया गया है, इसके अलावा, जहां कोई पद नहीं बनाया जाता है या स्वीकृत पदों के लिए कोई रिक्तियां मौजूद नहीं हैं, केवल 240 दिनों से अधिक समय तक काम करने के आधार पर, नियमितीकरण का निर्देश नहीं दिया जा सकता है। ऐसे मामले जहां नियमित पद और रिक्तियां हैं, नियुक्ति के लिए निर्धारित प्रक्रिया का पालन करना होगा।"

9. जहां तक सर्कुलर दिनांक 06.05.1997 पर आधारित अपीलार्थी के विवाद का संबंध है, जिसके आधार पर उन्होंने दावा किया कि 70-75 व्यक्तियों को नियमित किया गया था और उनके साथ भेदभावपूर्ण व्यवहार नहीं किया जा सकता था, इस तर्क को उच्च न्यायालय द्वारा विवादित निर्णय में निम्नलिखित तरीके से खारिज कर दिया गया हैः

"मिस. पाल का यह तर्क कि भेदभाव किया गया है क्योंकि प्रबंधन के परिपत्र दिनांक 6.5.1987 के आधार पर कई व्यक्तियों को नियमित किया गया था, स्वीकार नहीं किया जा सकता है। इस उद्देश्य के लिए उत्तर प्रदेश स्टेट इलेक्ट्रिसिटी बोर्ड बनाम पूरन चंद्र पांडे ने (2007) 11 SCC 92 में रिपोर्ट किया, का मामला भी उनके लिए कोई मददगार नहीं है। सबसे पहले, नियमितीकरण के लिए उक्त परिपत्र में कई शर्तें और मानदंड थे, लेकिन अपीलों में ऐसा कोई पता नहीं चला है कि

इन प्रतिवादी श्रमिकों ने ऐसे मानदंडों को पूरा किया है। दूसरा, उत्तर प्रदेश स्टेट इलेक्ट्रिसिटी बोर्ड (सुप्रा) के मामले में को-ऑपरेटिव सोसाइटी के कर्मचारी, जिन्हें इलेक्ट्रिसिटी बोर्ड द्वारा आदिग्रहित किया गया था, ने दावा किया कि इलेक्ट्रिसिटी बोर्ड का दिनांक 28.11.1996 का निर्णय, जिसके अंतर्गत 04.05.1990 से पहले से काम करने वाले कर्मचारियों को नियमित करने की अनुमति देने का निर्णय लिया है, उन पर भी लागू होगा क्योंकि उन्हें भी सोसाइटी में 4.5.1990 से पहले ही नियुक्त किया गया था। यह माना गया कि चूँकि अधिग्रहीत कर्मचारी 04.05.1990 से पहले सोसाइटी में नियुक्ति की गई थी, इसलिए उन्हें इलेक्ट्रिसिटी बोर्ड के उक्त निर्णय के लाभ से वंचित नहीं किया जा सकता था। ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है जिससे यह पता चले कि समिति द्वारा कर्मचारियों की नियुक्ति उस संबंध में निर्धारित प्रक्रिया का पालन किए बिना की गई थी, जबकि वर्तमान मामले में, प्रतिवादी को नियुक्ति की प्रक्रिया का पालन करने के बाद खाली और स्वीकृत पदों पर नियुक्त नहीं किया गया था।

इसके अलावा, सचिव कर्नाटक राज्य बनाम उमा देवी (2006) 4 SCC 1, के मामले में संविधान पीठ के निर्णय के पैराग्राफ 6 में, यह माना गया था कि कोई सरकारी आदेश, अधिसूचना या परिपत्र को कानून के अधिकार के तहत बनाए गए वैधानिक नियमों के लिए प्रतिस्थापित नहीं किया जा सकता है। R.S. Garg बनाम यूपी राज्य (2006 (6) SCC 430) के मामले में निर्णय के पैरा 16 में, यह अभिनिर्धारित किया गया है कि सरकार भी नियमित्करण के लिये नियम नहीं बना सकती है या कोई

कार्यकारी निर्देश जारी नहीं कर सकती है। पोस्ट मास्टर जनरल (उपरोक्त) के मामले में भी ऐसा ही विचार लिया गया है। इसलिए, प्रतिवादी कर्मचारी प्रबंधन के उक्त परिपत्र दिनांक 06.05.1987 के आधार पर और न ही उत्तर प्रदेश के उक्त निर्णय के आधार पर नियमितीकरण का दावा नहीं कर सकते हैं, ना ही इलेक्ट्रिसिटी बोर्ड (सुप्रा) उनके लिए किसी भी तरह की मदद करता है।

10. *उमा देवी*, के मामले में दिये गये फैसले पर भारी निर्भरता रखते हुए उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि चूंकि दोनों अपीलकर्ताओं ने 10 या अधिक वर्षों की सेवा प्रदान नहीं की है, इसलिए उनके मामले *उमा देवी* के मामले में संविधान पीठ द्वारा बनाए गए अपवाद में भी नहीं आते हैं।

11. उच्च न्यायालय के समक्ष अपीलकर्ताओं द्वारा उठाया गया एक अन्य विवाद यह था कि *उमा देवी* के मामले में *अनुपात* में श्रम न्यायालयों/औद्योगिक न्यायाधिकरणों द्वारा औद्योगिक निर्णय के मामलों में मामले की कोई प्रासंगिकता नहीं रखता। हालांकि, उच्च न्यायालय यूपी पावर कॉर्पोरेशन बनाम.बिजली मजदूर संघ और अन्य(2007) 5 एससीसी 755 के मामले में अदालत के फैसले का समर्थन करते हुए यह प्रस्तुतिकरण भी बेकार पाया गया .

12. हम यहां रिकॉर्ड कर सकते हैं कि डिवीजन बेंच ने स्वीकार किया कि दोनों मामलों में I.D. Act की धारा 25-एफ का उल्लंघन किया गया था। हालांकि, उन्हें इस कारण से बहाली का हकदार नहीं ठहराया गया क्योंकि उन्हें बिना किसी शर्त या वादे के कि उन्हें स्थायी बना दिया जाएगा, अस्थायी श्रमिकों के

रूप में नियुक्त किया गया था, और इसलिए ऐसे श्रमिकों की बहाली की गारंटी नहीं थी और वे केवल मौद्रिक मुआवजा पाने के हकदार थे। जहां तक मुआवजे का सवाल है, चूंकि दोनों अपीलकर्ताओं को अंतिम बार निकाले गए वेतन के बराबर राशि का भुगतान किया गया था, उन वर्षों की संख्या के लिए जब "आईडी अधिनियम की धारा 17-बी के तहत रिट याचिकाएं लंबित थीं, उच्च न्यायालय ने महसूस किया कि अपीलकर्ताओं को विधिवत मुआवजा दिया गया था और आगे कोई राशि देय नहीं थी।

13. उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण की वैधता को चुनौती देते हुए, अपीलकर्ताओं के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि उच्च न्यायालय के निर्णय का पूरा जोर *उमा देवी की* इस न्यायालय के निर्णय पर निर्भर करता है, जो उक्त निर्णय के रूप में अस्वीकार्य था, इस न्यायालय द्वारा बाद में **महाराष्ट्र राज्य सड़क परिवहन निगम और एएनआर बनाम कैस्टेरीब राज्य परिवर्तन कर्मचारी संगठन** (2009) 8 एससीसी 556, के मामले में स्पष्ट किया गया है जिसमें यह स्पष्ट रूप से माना गया है कि जहां तक औद्योगिक और श्रम न्यायालयों का संबंध है, उन्हें धारा 30 (1) (बी) के तहत व्यापक शक्तियां प्राप्त हैं अनुचित श्रम व्यवहार के मामले में सकारात्मक कार्रवाई करने के लिए औद्योगिक विवाद अधिनियम की और इन शक्तियों में नियमितीकरण/स्थायित्व का आदेश देने की शक्ति शामिल है। अदालत ने, आगे, उस निर्णय को स्पष्ट किया है की *उमा देवी* सार्वजनिक रोजगार के मामले में नियमितीकरण के लिए निर्देश जारी करने के लिए संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत अनुच्छेद 32 और उच्च न्यायालयों के तहत सर्वोच्च न्यायालय की शक्तियों के दायरे को सीमित करता है, लेकिन इसके लिए शक्ति धारा 30 (1) (बी)औधोगिक विवाद अधिनियम के तहत सकारात्मक कार्रवाई करना औद्योगिक/श्रम न्यायालयों के

साथ प्रतिबंध, बरकरार है। इस प्रकार, यह तर्क दिया गया था कि उच्च न्यायालय के विवादित निर्णय की पूरी इमारत जो कि उमा देवी (ऊपर) की नींव पर बनाई गई थी, ढे जाती है।

14. दूसरी ओर, एफसीआई के विद्वान वकील ने उत्तर प्रदेश पावर कॉर्पोरेशन (सुप्रा) में दिये फैसले का उल्लेख किया। जिसमें इस न्यायालय ने स्पष्ट दृष्टिकोण लिया है कि *उमा देवी* में निर्धारित कानून औद्योगिक न्यायाधिकरणों/श्रम न्यायालयों पर भी लागू किया गया है। यह प्रस्तुत किया गया था कि उत्तर प्रदेश पावर कॉर्पोरेशन (सुप्रा) ke के मामले में दिये गये निर्णय को महाराष्ट्र राज्य सड़क परिवहन निगम (सुप्रा) के मामले में दिये गये बाद के फैसले में ध्यान नहीं दिया गया था और इस अदालत को निगम के मामले में दिए गए पहले के फैसले का पालन करना चाहिए। विद्वान वकील ने इस मामले में इस अदालत के हाल के फैसले **सहायक इंजीनियर, राजस्थान विकास निगम एवं अन्य बनाम गौतम सिंह** (2013) 5 एससीसी 136 पर भी यह तर्क दिया कि भले ही औधोगिक विवाद अधिनियम की धारा 25-एफ के प्रावधानों का अनुपालन न करने के कारण दैनिक मजदूरी की सेवाओं को गलत तरीके से समाप्त किया जाता है, ऐसा कर्मचारी वहाली का हकदार नहीं है, बल्कि केवल मौद्रिक क्षति पूर्ति का हकदार है।

उपरोक्त आधार पर, विद्वान वकील ने अपील को खारिज करने का अनुरोध किया।

15. हमने दोनों पक्षों के विद्वान वकील द्वारा प्रस्तुत दलीलों पर पर्याप्त विचार किया है। उपरोक्त आख्यानों से यह स्पष्ट है कि इस मामले के दो पहलू हैं, जो संदर्भ की शर्तों में भी परिलक्षित होते हैं, जिनके आधारो पर विवादों को सी. जी. आई. टी. को संदर्भित किया गया था। पहला टर्मिनेशन की वैधता

को संदर्भित करता है और दूसरा नियमितीकरण से संबंधित है। जिन दो मुद्दों पर विचार किया जाना है, वे है:

(1) क्या अपीलकर्ताओं की सेवा की समाप्ति अवैध थी?

यहां संबंधित मुद्दा यह होगा कि यदि यह अवैध है, तो क्या इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, अपीलकर्ता सेवा में बहाली के हकदार होंगे या बहाली के बदले मौद्रिक मुआवजे को उचित ठहराया जाएगा?

(2) क्या अपीलकर्ता अपनी सेवाओं को नियमित करने के हकदार हैं?

"हम यह भी दर्ज करेंगे कि इस मामले के तथ्यों में दोनों मुद्दे कुछ हद तक अतिव्यापी हैं जो इन मुद्दों पर हमारी चर्चा की प्रगति के साथ स्पष्ट हो जाएगा।"

समाप्ति की वैधता के बारे में।

16. यह मुद्दा शायद ही कोई समस्या पैदा करता है। स्वीकार किए गए तथ्य यह हैं कि दोनों अपीलार्थी ने अपने वर्खास्तगी/समाप्ति से पहले लगातार **240** दिनों से अधिक समय तक काम किया था। उनके वर्खास्तगी के समय**,** जबकि उनकी लगातार सेवा **240** दिनों से अधिक **(**वास्तव में लगभग **3** वर्ष**)** थी। उन्हें नोटिस के साथ-साथ छंटनी मुआवजे के बदले में कोई नोटिस या भुगतान नहीं दिया गया था**.** इस प्रकार**,** आईडी की धारा **25-**एफ के अनुसार उपरोक्त बकाया का भुगतान करने में छंटनी की अनिवार्य पूर्व-शर्त अधिनियम का पालन नहीं किया गया था। यह वर्खास्तगी को अवैध बनाने के लिए पर्याप्त है। यहां तक कि उच्च न्यायालय ने भी विवादित

फैसले में इस स्थिति को स्वीकार कर लिया है और हमारे सामने भी इस पहलू पर कोई विवाद नहीं था। इसके साथ, हम राहत के मुद्दे पर आते हैं जो ऐसे मामलों में दिया जाना चाहिए, क्योंकि यह हमारे सामने भी गरमागरम बहस का विषय था।

17. वेसक, दोनों श्रमिक दैनिक मजदूरी के आधार पर काम कर रहे थे. उनकी नियुक्ति भी परिस्थिति की तात्कालिकता में थी। जहां तक अपीलकर्ता नंबर **1** का सवाल है, उन्हें **1983** में अलग कर दिया गया था। उनके मामले में विवाद को **1992** में ही निर्णय के लिए सी. जी. आई. टी. को भेजा गया था। **9** साल का समय अंतराल है। हालांकि इस तरह की असामान्य देरी के लिए कोई कारण रिकॉर्ड पर दिखाई नहीं दे रहा है, ऐसा लगता है कि उन्होंने अपने विघटन के कुछ साल बाद औद्योगिक विवाद उठाया था, जिसका अनुमान सी. जी. आई. टी. के फैसले को पढ़ने से लगाया जा सकता है, क्योंकि इससे पता चलता है कि उनके विघटन के बाद वह केवल अभ्यावेदन देते रहे और उन्होंने न्यायिक कार्यवाही का सहारा केवल दिनांक **6.5.1997** के सर्कुलर के जारी होने के बाद लिया, जिसके अनुसार एफसीआई ने उन सभी आकस्मिक श्रमिकों की सेवाओं को नियमित करने का फैसला किया था, जिन्होंने **1996** से पहले **90** दिनों से अधिक समय पूरा किया था। हालांकि, इस समय हम जिस बात पर प्रकाश डाल रहे हैं, वह यह है कि अपीलकर्ता नंबर **1** ने मुश्किल से **3** साल तक दैनिक मजदूरी के आधार पर काम किया था और वह पिछले **30** सालों से सेवा से बाहर है। यहां तक कि जब ट्रिब्यूनल ने **1996** में अपना फैसला सुनाया, तब भी उनकी बर्खास्तगी को **13** साल बीत चुके थे। इन तथ्यों पर, उन व्यक्तियों को बहाली की राहत देना मुश्किल होगा जो दैनिक वेतनभोगी के रूप में लगे हुए थे और जिनकी सेवाएं को बहुत पहले समाप्त कर दिया गया था। और, इसके अलावा जहां

अधिनियम की धारा **25-**एफ के प्रावधानों का पालन न करने के तकनीकी आधार पर ही समाप्ति को अवैध माना जाता है। इस पहलू पर कानून**,** जैसा कि निर्णयों की श्रृंखला द्वारा समय समय पर कई निर्णय द्वारा विकसित किया गया है**,** उपरोक्त कानूनी स्थिति को बहुत वाक्पटु बनाता है। इन सभी निर्णयों से गुजरना ज़रूरी नहीं है**. <u>बीएसएनएल बनाम भुरुमल</u> 2013 (15)** स्केल **131** के मामले में इसी पीठ द्वारा दिये गये हाल के निर्णय का संदर्भ देकर हमारा उद्देश्य पूरा हो जाएगा, जिसमें इस मुद्दे से संबंधित पहले के मामले के कानून पर ध्यान दिया है। उक्त फैसले के निम्नलिखित अंश पुनः सेवा बहाली के सवाल पर इस अदालत के पहले के फैसलों को प्रतिबिंबित करेंगेः

> अपीलार्थी के विद्वान वकील ने दो फैसलों का उल्लेख किया, जिसमें इस अदालत ने बहाली के बजाय मुआवजा दिया। बीएसएनएल बनाम मान सिंह (2012) 1 एससीसी 558, के मामले में इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि जब औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 25-एफ के उल्लंघन के कारण समाप्ति को दरकिनार कर दिया जाता है, तो यह आवश्यक नहीं है कि अधिकार के मामले के रूप में बहाली की राहत भी दी जाए। प्रभारी अधिकारी और एएनआर बनाम शंकर शेट्टी (2010) 9 एससीसी 126, के मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि वे मामले जहां श्रमिक दैनिक मजदूरी के आधार पर काम करता था, और केवल 240 दिनों या 2 से 3 वर्षों की अवधि के लिए काम किया और जहां कई साल पहले समाप्ति हुई थी, हाल की प्रवृत्ति बहाली के बदले में मुआवजा देने की थी। शंकर शेट्टी के इस निर्णय में इस प्रवृत्ति को विभिन्न निर्णयों का उल्लेख करके दोहराया गया था**,** जैसा कि निम्नलिखित चर्चा से स्पष्ट है।

क्या ऐसे मामले में बहाली का आदेश स्वचालित रूप से पालन करना चाहिए जहां औद्योगिक विवाद अधिनियम, **1947 (**संक्षेप में "आईडी अधिनियम"**)** की धारा **25**-एफ का उल्लंघन करते हुए दैनिक वेतनभोगी की नियुक्ति समाप्त कर दी गई है**?** हाल के वर्षों में इस न्यायालय के निर्णयों का क्रम उपरोक्त प्रश्न पर समान रहा है।

जगबीर सिंह बनाम हरियाणा राज्य कृषि एमकेटीडी में बोर्ड **(2009) 15 SCC 327** इस न्यायालय का निर्णय देते हुए, हम में से एक **(R.M.Lodha,** जे.**)** ने इस न्यायालय के हाल के कुछ निर्णयों पर ध्यान दिया, अर्थात्, **U.P.State** ब्रासवेयर कॉर्प. लिमिटेड. बनाम उदय नारायण पांडे **(2006) 1 SCC 479,** उत्तरांचल वन विभाग निगम बनाम **M.C.Joshi (2007) 9 SCC 353,** मध्य प्रदेश राज्य बनाम ललित कुमार वर्मा **(2007) 1 SCC 575, M.P. Admn.** बनाम त्रिभुवन **(2007) 9 SCC 748,** सीता राम बनाम मोती लाल नेहरू किसान प्रशिक्षण संस्थान **(2008) 5 SCC 75,** जयपुर विकास प्राधिकरण बनाम रामसाहाई **(2006) 11 SCC 684,** जीडीए बनाम अशोक कुमार **(2008) 4 SCC 261** और महबूब दीपक बनाम नगर पंचायत, गजरौला **(2008) 1 SCC 575** और इस प्रकार बताया गया है: **(**जगबीर सिंह मामला, एससीसी **pp.330** और **335** पैरा **7** और **14)**।

"यह सच है कि कई निर्णयों में व्यक्त किए गए इस न्यायालय के पहले के दृष्टिकोण ने इस कानूनी स्थिति को प्रतिबिंबित किया कि यदि किसी कर्मचारी की समाप्ति अवैध पाई जाती है, तो पूर्ण वेतन के साथ बहाली की राहत आमतौर पर होगी।**" ""**

हालांकि, हाल के दिनों में, कानूनी स्थिति में बदलाव आया है और कई मामलों में, इस अदालत ने लगातार यह विचार रखा है कि बकाया वेतन के साथ बहाली के माध्यम से राहत स्वतः नहीं होती है। और किसी दी गई तथ्य स्थिति में पूरी तरह से अनुचित हो सकती है, भले ही किसी कर्मचारी की बर्ख़ास्तगी निर्धारित प्रक्रिया का उल्लंघन करती हो। न्याय के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए बहाली के बजाय मुआवजा दिया गया है।

इस प्रकार, ये देखा जा सकता है कि हाल के समय में निर्णयों की एक श्रृंखला द्वारा, इस न्यायालय ने स्पष्ट रूप से निर्धारित किया है कि धारा **25-**एफ के उल्लंघन में पारित छंटनी का आदेश हालांकि रद्द किया जा सकता है लेकिन बहाली का आदेश नहीं होना चाहिए, ऐसे मामले में पूर्ण वेतन के साथ बहाली का पुरस्कार जहां कर्मचारी ने समाप्ति की तारीख से पहले एक वर्ष में **240** दिनों का काम पूरा कर लिया है, विशेष रूप से, इस अदालत द्वारा दैनिक वेतनभोगियों को उचित नहीं पाया गया है और इसके बजाय मुआवजा दिया गया है। इस अदालत ने एक दैनिक वेतनभोगी के बीच अंतर किया है जो एक पद नहीं रखता है और एक स्थायी कर्मचारी है।

जगबीर सिंह को बहुत हाल ही में टेलीग्राफ विभाग में आवेदन किया गया है। बनाम संतोष कुमार सील **(2010) 6 SCC 773,** जिसमें इस न्यायालय ने कहाः **(SCC p.777,** पैरा **11)**

उपरोक्त कानूनी स्थिति और इस तथ्य को देखते हुए कि श्रमिक लगभग **25** साल पहले दैनिक मजदूरी के रूप में लगे हुए थे और उन्होंने मुश्किल से **2** या **3** साल तक काम किया

था, उन्हें बहाली और वापस मजदूरी की राहत को उचित नहीं कहा जा सकता है और इसके बजाय मौद्रिक मुआवजा न्याय के उद्देश्यों को पूरा करेगा।

उपरोक्त पैराग्राफ में संदर्भित फैसलों और उक्त फैसले के अन्य हिस्से में कुछ और मामलों पर ध्यान देते हुए, कानूनी स्थिति को निम्नलिखित तरीके से संक्षेपित किया गया थाः

उपरोक्त निर्णयों को पढ़ने से यह स्पष्ट है कि पूर्ण वेतन के साथ बहाली के अनुदान का सामान्य सिद्धांत, जब समाप्ति अवैध पाई जाती है, तो सभी मामलों में यांत्रिक रूप से लागू नहीं होता है। हालांकि यह एक ऐसी स्थिति हो सकती है जहां एक नियमित/स्थायी कर्मचारी की सेवाओं को अवैध रूप से और/या दुर्भावनापूर्ण और/या उत्पीड़न, अनुचित श्रम अभ्यास आदि के माध्यम से समाप्त कर दिया जाता है। हालांकि, जब दैनिक वेतनभोगी कर्मचारी की समाप्ति के मामले की बात आती है और जहां प्रक्रियात्मक दोष के कारण समाप्ति अवैध पाई जाती है, अर्थात् औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा **25**-एफ का उल्लंघन, यह अदालत ऐसे मामलों में यह विचार रखने में सुसंगत है कि पिछली मजदूरी के साथ बहाली स्वचालित नहीं है और इसके बजाय कामगार को मौद्रिक मुआवजा दिया जाना चाहिए जो न्याय के उद्देश्यों को पूरा करेगा। इस दिशा में स्थानांतरित करने का तर्क स्पष्ट है।

ऐसे मामलों में बहाली की राहत से इनकार करने के कारण स्पष्ट हैं। यह सामान्य कानून है कि जब औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा **25 –** एफ के तहत अनिवार्य रूप

से अपेक्षित छंटनी मुआवजे और वेतन का भुगतान न करने के कारण समाप्ति अवैध पाई जाती है, तो बहाली के बाद भी, प्रबंधन के लिए यह हमेशा खुला है कि वह उस कर्मचारी को छंटनी मुआवजे का भुगतान करके उसकी सेवाओं को समाप्त कर दे। चूंकि इस तरह के कर्मचारी दैनिक मजदूरी के आधार पर काम कर रहा था और उसे बहाल किए जाने के बाद भी, उसे नियमितीकरण की मांग करने का कोई अधिकार नहीं है (देखें: कर्नाटक राज्य बनाम उमा देवी **(2006) 4 SCC 1)**। इस प्रकार जब वह नियमितीकरण का दावा नहीं कर सकता है और उसे दैनिक वेतनभोगी कर्मचारी के रूप में भी बने रहने का कोई अधिकार नहीं है, ऐसे कर्मचारी को बहाल करने में कोई उपयोगी उद्देश्य पूरा नहीं होने वाला है और उसे अदालत द्वारा ही मौद्रिक मुआवजा दिया जा सकता है, जैसे कि उसे बहाली के बाद फिर से समाप्त कर दिया गया हो, उसे केवल छंटनी मुआवजे और नोटिस भुगतान के रूप में मौद्रिक मुआवजा मिलेगा। ऐसी स्थिति में, बहाली की राहत देना, वह भी लंबे अंतराल के बाद, किसी भी उद्देश्य की पूर्ति नहीं करेगा।

हालांकि, हम यहां एक चेतावनी जोड़ना चाहेंगे। ऐसे मामले हो सकते हैं जहां एक दैनिक वेतनभोगी कर्मचारी की बर्खास्तगी को इस आधार पर अवैध पाया जाता है कि इसे अनुचित श्रम अभ्यास के रूप में या लास्ट कम फर्स्ट गो के सिद्धांत का उल्लंघन किया गया था। ऐसे कर्मचारी की छंटनी करते समय दैनिक वेतन पर काम करने वाले कनिष्ठों को उनके पास रखा गया था। ऐसी स्थिति भी हो सकती है कि उससे जूनियर व्यक्ति को किसी

पॉलिसी के तहत रेगुलर किया जाता है लेकिन संबंधित कर्मचारी को बर्खास्त कर दिया जाता है। ऐसी परिस्थितियों में, बर्खास्त कर्मचारी को तब तक बहाली से इनकार नहीं किया जाना चाहिए जब तक कि बहाली के बजाय मुआवजे के अनुदान के पाठ्यक्रम को अपनाने के लिए कुछ अन्य महत्वपूर्ण कारण न हों। ऐसे मामलों में, बहाली नियम होना चाहिए और केवल असाधारण मामलों में लिखित रूप में बताए गए कारणों से, इस तरह की राहत से इनकार किया जा सकता है।

18. हम यही स्पष्ट करते है कि उपर्युक्त उमा देवी का संदर्भ ऐसी स्थिति में है, जहां संदर्भित विवाद केवल सेवा समाप्ति से संबंधित था। ऊपर दिए गए सिद्धांतों के अनुसार, अगर यह ऐसा मामला होता जहां मुद्दा केवल समाप्ति की वैधता तक सीमित होता, तो अपीलकर्ता नंबर 1 बहाली का हकदार नहीं होता। अपीलकर्ता संख्या 2 के संबंध में भी यह स्थिति हो सकती है। हालांकि उनके मामले में तथ्यात्मक मैट्रिक्स थोड़ा अलग है, लेकिन इससे अपने आप में ज्यादा फर्क नहीं पड़ता। हालांकि, मामला यहीं खत्म नहीं होता है. वर्तमान मामले में, सी. जी. आई. टी. को विवाद का संदर्भ सेवा समाप्त करने की वैधता तक सीमित नहीं था। संदर्भ की शर्तों में अपीलकर्ताओं द्वारा उनकी सेवा को नियमित करने के लिए किया गया दावा भी शामिल था।

19. हम पहले ही बता चुके हैं कि बहाली और नियमितीकरण के दो पहलू आपस में मिले हुए हैं और एक दूसरे पर ओवरलैप हो रहे है। अगर अपीलकर्ता अपनी सेवाओं को नियमित करने के हकदार होते, तो उस स्थिति में स्वाभाविक परिणाम के रूप में बहाली की राहत देना स्वयंसिद्ध होता। इसलिए, इस

स्तर पर, यह जांच करना आवश्यक हो जाता है कि क्या सी. जी. आई. टी. का आदेश, जैसा कि उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा उनकी सेवा के नियमितीकरण का निर्देश देते हुए पुष्टि की गई थी, उचित था या उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा उस राहत को अस्वीकार करने का दृष्टिकोण सही है।

Re: नियमितीकरण की राहत

20. इससे पहले कि हम इस प्रश्न का विचार करें, यह जांचना आवश्यक होगा कि क्या *उमा देवी मामला* में संविधान पीठ का निर्णय औद्योगिक न्यायाधिकरण से संबंधित मामलों में लगा होता है। हम पहले ही इस संबंध में अपीलकर्ताओं के वकील के तर्क को ऊपर इंगित कर चुके हैं, जिसमें *महाराष्ट्र राज्य सड़क परिवहन मामला* कि उमा देवी का निर्णय औद्योगिक या श्रम न्यायालयों को बाध्यकारी होगा। दूसरी ओर, एफसीआई के वकील ने यही दलील देने के लिए *U.P. Power कॉर्पोरेशन के* फैसले का उल्लेख किया है कि *उमा देवी* का निर्णय औद्योगिक न्यायाधिकरणों/श्रम न्यायालयों पर समान रूप से लागू होता है। इस प्रकार, इस समय उपरोक्त दो निर्णयों की जांच करना अनिवार्य हो जाता है।

21. *यूपी पावर कॉर्पोरेशन* के मामले में दिये गये फ़ैसले को पढ़ने से पता चलता है कि इस मामले में प्रतिवादी Nos.2 और 3 की कथित वर्खास्तगी के लिए औद्योगिक न्यायाधिकरण को संदर्भित किया गया था। उनका विवरण दिए बिना यह उल्लेख करना पर्याप्त होगा कि एक मामले में न्यायाधिकरण ने कहा कि सेवा में शामिल होने के तीन साल बाद दोनों प्रतिवादी 2 और 3 को नियमित कर दिया गया था। अपीलकर्ताओं ने रिट याचिका दायर की जिसे भी खारिज कर दिया गया था। उच्च न्यायालय के

आदेश को चुनौती देते हुए, अपीलकर्ताओं ने इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया था। यह तर्क दिया गया था कि इस निर्णय को देखते हुए औद्योगिक न्यायालय द्वारा कोई नियमितीकरण आदेश पारित नहीं किया जा सकता था। श्रमिकों के वकील ने एक विशिष्ट दलील दी थी कि था *उमा देवी की* केस में औद्योगिक न्यायनिर्णायक की शक्तियों पर विचार नहीं किया गया था और यह कि एक तरफ सिविल सूट या रिट याचिका में उठाए गए दावे और औद्योगिक न्याय निर्णायक द्वारा निर्णय लिए गए दावे के बीच अंतर था। यह भी तर्क दिया गया था कि श्रम अदालत औद्योगिक शांति बनाए रखने के लिए अनुबंध में मौजूद शर्तें बना सकती है और इसलिए उसके पास अनुबंध की शर्तों को बदलने की शक्ति थी। उसमें अपीलार्थी यूपी पावर कॉर्पोरेशन, के सबमिशन को स्वीकार करते समय कोर्ट ने निम्नलिखित कारण दिएः

> यह सच है जैसा कि प्रतिवादी के विद्वान वकील ने तर्क दिया कि औद्योगिक न्यायनिर्णायकों की शक्तियों के प्रभाव के संबंध में प्रश्न सीधे तौर पर उमादेवी मामले में मुद्दा नहीं था। लेकिन उमादेवी मामले में बहुत तर्क भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 के आधार पर है। हालांकि औद्योगिक न्यायनिर्णायक रोजगार के अनुबंध की शर्तों में बदलाव कर सकता है, लेकिन वह ऐसा कुछ नहीं कर सकता जो अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करता हो। यदि मामला वह है जो नियमितीकरण की अवधारणा द्वारा कवर किया गया है, तो उसे अलग तरह से नहीं देखा जा सकता है।
>
> प्रतिवादी के विद्वान वकील की दलील कि जिस समय उच्च न्यायालय ने मामले का फैसला किया था, उमादेवी मामले में निर्णय नहीं दिया गया था, वास्तव में कोई महत्व नहीं

रखता है। कर्मचारी-नियोक्ता संबंध के बिना नियमितीकरण का मामला नहीं हो सकता। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, नियमितीकरण की अवधारणा स्पष्ट रूप से संविधान के अनुच्छेद 14 से जुड़ी हुई है। "हालांकि, अगर किसी मामले में तथ्य स्थिति को उमादेवी मामले के पैरा 45 में बताई गई बातों से कवर किया जाता है, तो औद्योगिक न्यायनिर्णायक राहत को संशोधित कर सकता है, लेकिन यह नियमितीकरण के बारे में उमादेवी मामले में इस न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियों को कम नहीं करता है।"

तथ्यों के आधार पर, यह अपीलकर्ताओं के विद्वान वकील द्वारा प्रस्तुत किया जाता है कि प्रतिवादी नंबर 2 ने स्वयं स्वीकार किया कि उन्होंने कभी पंप ऑपरेटर के रूप में काम नहीं किया, बल्कि दैनिक मजदूरी के आधार पर काम किया था। उसके पास ज़रूरी योग्यता भी नहीं थी. किसी भी दृष्टिकोण से देखें तो, नियमितीकरण के लिए दिया गया nirdesh, उमा देवी मामले में जो कहा गया है, उसके मद्देनजर नहीं दिया जा सकता है।

22. उपरोक्त से यह स्पष्ट है कि न्यायालय ने *उमादेवी का मामला* में निहित रेखांकित संदेश पर जोर दिया, कि दैनिक मजदूरी का नियमितीकरण, जिसे उचित चयन प्रक्रिया आदि से गुजरने के बाद नियुक्त नहीं किया गया है।

यह अस्वीकार्य है क्योंकि यह भारत के संविधान के Art.14 का उल्लंघन था और Art.14 पर आधारित यह सिद्धांत औद्योगिक न्यायाधिकरण पर भी लागू होगा क्योंकि संविधान के Art.14 का उल्लंघन

करते हुए किसी श्रमिक की सेवाओं को नियमित करने का कोई निर्देश नहीं हो सकता है। जैसा कि हम इसके बाद समझाते हैं, इसका मतलब यह होगा कि औद्योगिक अदालत उन मामलों में दैनिक वेतनभोगी श्रमिक की सेवा को नियमित करने के लिए कोई निर्देश जारी नहीं करेगी, जहां इस तरह का नियमितकरण संविधान के Art.14 के प्रावधानों का उल्लंघन करने के बराबर होगा। लेकिन इसके लिए, यह औद्योगिक न्यायाधिकरणों/श्रम न्यायालयों को ऐसा निर्देश जारी करने से नहीं रोकेगा, जो औद्योगिक विवाद अधिनियम के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए औद्योगिक न्यायनिर्णायकों के पास है जो विशेष रूप से ऐसी शक्तियां प्रदान करते हैं। यह न्यायालय द्वारा मान्यता प्राप्त है, यहां तक कि उपरोक्त निर्णय में भी।

23. इस पहलू पर विस्तृत चर्चा के लिए, हम महाराष्ट्र राज्य सड़क परिवहन निगम के मामले में अनुपात पर चर्चा करने के लिए आगे बढ़ते हैं । उस मामले में प्रतिवादी करमचारी यूनियन ने औद्योगिक अदालत बॉम्बे में दो शिकायतें दायर की थीं। जिसमें आरोप लगाया कि अपीलकर्ता-निगम ने कुछ कर्मचारियों के साथ अनुचित श्रम व्यवहार किया था, जिन्हें अपीलकर्ता द्वारा वर्षों 1980-1985 के बीच बस की सफाई के लिए आकस्मिक श्रमिकों के रूप में नियुक्त किया था। शिकायतों में कहा गया था कि इन कर्मचारियों को निगम के संबंधित डिपो में हर दिन कम से कम 8 घंटे काम करने के लिए कहा गया था; उनके द्वारा किया गया काम स्थायी प्रकृति का था लेकिन उन्हें मामूली राशि का भुगतान किया जा रहा था; और यहां तक कि जब निगम में सफाई करने वालों (sweeper)/सफाई करने वालों (Cleaner) का पद उपलब्ध था, इन कर्मचारियों को वर्षों तक आकस्मिक और अस्थायी आधार पर रखा गया था, जो उन्हें स्थायी होने के

लाभ से वंचित करते थे। निर्णय के बाद, औद्योगिक न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि निगम ने महाराष्ट्र ट्रेड यूनियनों की मान्यता और अनुचित श्रम अभ्यास अधिनियम 1971 (एमआरटीयू और पीयूएलपी अधिनियम) की अनुसूची IV के आइटम 5 और 9 के तहत अनुचित श्रम व्यवहार किया था । इसके परिणामस्वरूप, इसने निगम को संबंधित कर्मचारियों को समान मजदूरी का भुगतान करने का निर्देश दिया, जो स्वच्छकों को दी जा रही थी और उन्हें मजदूरी के बकाया का भुगतान करने का भी निर्देश दिया। दूसरी शिकायत में, औद्योगिक न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि निगम इन कर्मचारियों को अस्थायी/आकस्मिक/दैनिक मजदूरी के आधार पर वर्षों तक जारी रखकर और इस प्रकार उन्हें परमानेंट के लाभों से वंचित करके अनुसूची IV के आइटम 6 के तहत अनुचित श्रम अभ्यास में लिप्त था।

इस शिकायत में निर्देश था कि उन्हें 3.8.1982 क्लीनर के पद पर लागू स्थायीता, मजदूरी और अन्य सभी लाभ देकर अनुचित श्रम प्रथा को बंद किया जाए । निगम ने औद्योगिक न्यायालय के इन दो आदेशों को पांच अलग-अलग रिट याचिकाओं में बॉम्बे उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी। इन्हें विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिनांक 2.8.2001 के सामान्य निर्णय के माध्यम से निपटाया गया था, जिसमें कहा गया था कि शिकायतें विचारणीय थीं और औद्योगिक न्यायालय का यह निष्कर्ष कि निगम अनुचित श्रम व्यवहार में लिप्त था, भी सही था। निगम ने एलपीए दाखिल करके विद्वान एकल न्यायाधीश के फैसले को चुनौती दी, जिससे 6.5.2005 को डिवीजन बेंच द्वारा खारिज कर दिया गया था। इस तरह मामला सुप्रीम कोर्ट के सामने आया. इस न्यायालय के समक्ष अपीलकर्ताओं द्वारा उठाए गए तर्कों में से

एक यह थी कि औद्योगिक न्यायालय द्वारा इन कर्मचारियों को सफाई कर्मचारियों के पद पर लागू वेतन और स्थायीता के अन्य लाभ देने का निर्देश नहीं दिया जा सकता था, क्योंकि यह निर्देश *उमादेवी* के मामले में संविधान पीठ द्वारा निर्धारित अनुपात के विपरीत था ।

अदालत ने इस तर्क पर विचार करते हुए एम.आर.टी.यू और पी.यू.एल.पी. अधिनियम की योजना पर विचार किया। यह देखा गया कि अनुचित श्रम व्यवहार से संबंधित शिकायतें औद्योगिक न्यायालय के समक्ष दायर की जा सकती हैं। अदालत ने कहा कि उस अधिनियम की धारा 28 ऐसी शिकायतों से निपटने की प्रक्रिया प्रदान करती है, और धारा 30 अनुचित श्रम व्यवहार से संबंधित मामलों सहित औद्योगिक और श्रम न्यायालयों को उसके समक्ष मामलों पर निर्णय लेने के लिए दी गई शक्तियों को सूचीबद्ध करती है। इस खंड को पढ़ने पर, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यह औद्योगिक/श्रम न्यायालयों को यह घोषित करने की विशिष्ट शक्ति देता है कि एक अनुचित श्रम अभ्यास किया गया है और उन व्यक्तियों को न केवल इस तरह के अनुचित श्रम अभ्यास को रोकने और रोकने का निर्देश देने के लिए बल्कि सकारात्मक कार्रवाई करने के लिए भी निर्देश देती है। ऐसी शक्तियाँ प्रदान करने वाली धारा 30(1) नीचे प्रस्तुत की गई है:

> 30. औद्योगिक और श्रम न्यायालयों की शक्तियां-
>
> **(1)** जहां कोई अदालत यह निर्णय लेती है कि शिकायत में नामित कोई भी व्यक्ति किसी अनुचित श्रम अभ्यास में शामिल है, या इसमें शामिल है, तो वह

अपने आदेश में कह सकती है-

(a) घोषणा करें कि उस व्यक्ति द्वारा एक अनुचित श्रम अभ्यास किया गया है या किया जा रहा है, और किसी अन्य व्यक्ति को निर्दिष्ट करें जो अनुचित श्रम अभ्यास में शामिल है, या इसमें शामिल है;

(b) ऐसे सभी व्यक्तियों को इस तरह के अनुचित श्रम अभ्यास को रोकने और रोकने के लिए निर्देशित करना, और इस तरह की सकारात्मक कार्रवाई करना (अनुचित श्रम अभ्यास से प्रभावित कर्मचारी या कर्मचारियों को उचित मुआवजे के भुगतान, या कर्मचारी या कर्मचारियों की वेतन के साथ या उसके बिना बहाली, या उचित मुआवजे का भुगतान), जैसा कि न्यायालय की राय में अधिनियम की नीति को प्रभावी बनाने के लिए आवश्यक हो सकता है; "

(c) जहां कोई मान्यता प्राप्त संघ किसी अनुचित श्रम अभ्यास में लगा हुआ है या उसमें शामिल है, यह निर्देश देता है कि इसकी मान्यता रद्द कर दी जाएगी या धारा 20 की उप-धारा (1) के तहत इसके सभी या किसी भी अधिकार या धारा 23 के तहत इसके अधिकार को निलंबित कर दिया जाएगा।

24. "यह भी ध्यान दिया गया कि अधिनियम की धारा 32 में यह प्रावधान है कि न्यायालय के पास इस अधिनियम के किसी भी प्रावधान के तहत निर्णय के लिए किसी भी आवेदन या उसे संदर्भित शिकायत से

उत्पन्न होने वाले सभी संबंधित मामलों पर निर्णय लेने की शक्ति होगी।" "" अदालत ने *उमा देवी* मामले में दिये गये फैसले से व्यापक रूप से उद्धृत किया ताकि उक्त निर्णय में निर्धारित सटीक अनुपात को प्रदर्शित किया जा सके और उसके बाद निम्नलिखित प्रश्न और उसका उत्तर तैयार किए गए:

> जो प्रश्न विचार के लिए उत्पन्न होता है voh hai ki उमादेवी निर्णय में संविधान पीठ द्वारा एमआरटीयू और पीयूएलपी अधिनियम के प्रावधानों को वैधानिक स्थिति से वंचित कर दिया गया है ? हमारे निर्णय में, यह नहीं है।

25. निष्कर्ष के समर्थन में विस्तृत कारण दिए गए हैं, जिसमें कहा गया है कि एमआरटीयू और पीयूएलपी अधिनियम औद्योगिक/श्रम न्यायालयों को किसी भी व्यक्ति द्वारा किए गए/किए जा रहे अनुचित श्रम अभ्यास के बारे में निर्णय लेने और किसी विशेष अभ्यास को अनुचित श्रम अभ्यास घोषित करने के लिए और ऐसे व्यक्ति को अनुचित श्रम अभ्यास से दूर रहने का निर्देश देने का प्रावधान करता है। धारा 30 में निहित प्रावधान औद्योगिक और श्रम न्यायालयों को *उमा देवी* के मामले में ऐसी शक्ति प्रदान की गई है, जिसे न्यायालय द्वारा निम्नलिखित शब्दों में समझाया गया हैः

> धारा 30 के तहत औद्योगिक और श्रम न्यायालयों को दी गई शक्ति बहुत व्यापक है और उसमें उल्लिखित सकारात्मक कार्रवाई समावेशी है और संपूर्ण नहीं है। स्थायी कर्मचारियों के दर्जे और विशेषाधिकारों से वंचित करने के उद्देश्य से, बदलियाँ, आकस्मिक या अस्थायी सेवाओं को नियोजित

करना और उन्हें वर्षों तक जारी रखना, अनुसूची IV के आइटम 6 के तहत नियोक्ता की ओर से एक अनुचित श्रम अभ्यास है। एक बार जब शिकायत में नियोक्ता की ओर से इस तरह की अनुचित श्रम प्रथा स्थापित हो जाती है, तो औद्योगिक और श्रम न्यायालयों को एक गलती करने वाले नियोक्ता को निवारक के साथ-साथ सकारात्मक निर्देश जारी करने का अधिकार है।

“एम.आर.टी.यू. और पी.यू.एल.पी. अधिनियम के प्रावधान और औद्योगिक और श्रम न्यायालयों की शक्तियां उमादेवी में विचार के अधीन बिल्कुल भी नहीं थीं। वास्तव में, अनुचित श्रम प्रथा से संबंधित वर्तमान जैसे मुद्दे का उल्लेख, विचार या निर्णय उमादेवी में बिल्कुल भी नहीं किया गया था। कर्मचारियों को बदली के रूप में शामिल करने में नियोक्ता की ओर से अनुचित श्रम अभ्यास, और उन्हें स्थायी कर्मचारियों के दर्जे और विशेषाधिकारों से वंचित करने के उद्देश्य से वर्षों तक जारी रखना, जैसा कि अनुसूची IV के आइटम 6 में प्रदान किया गया है और अधिनियम की धारा 30 के तहत औद्योगिक और श्रम न्यायालयों की शक्ति संविधान पीठ के समक्ष निर्णय या विचार के लिए नहीं आई।

उमादेवी औद्योगिक और श्रम न्यायालयों को एमआरटीयू और पीयूएलपी अधिनियम की धारा 30 के साथ पठित धारा 32 के तहत उनकी वैधानिक शक्ति से वंचित नहीं करती है, ताकि अनुसूची IV के आइटम 6 के तहत नियोक्ता की ओर से अनुचित श्रम अभ्यास का शिकार हुए श्रमिकों की स्थायीता का आदेश दिया जा सके, जहां वे जिन पदों पर काम कर रहे हैं। एक बार अनुसूची IV के आइटम 6 के तहत नियोक्ता की ओर से अनुचित श्रम अभ्यास स्थापित हो जाता है, और उमादेवी को एमआरटीयू और पीयूएलपी अधिनियम की धारा 30 के तहत उचित आदेश पारित करने में औद्योगिक और श्रम न्यायालयों की शक्तियों को ओवरराइड करने वाला नहीं माना जा सकता है।

26. अदालत ने इस कानूनी प्रस्ताव को भी स्वीकार कर लिया कि अदालतें पदों के निर्माण का निर्देश नहीं दे सकती हैं, जैसा कि **महात्मा फुले कृषि विश्वविद्यालय बनाम नासिक जिला सेठ कामगार यूनियन** (2001) 7 एससीसी 346 में कहा गया है। इस फैसले का उल्लेख करते हुए, अदालत ने स्पष्ट किया कि पद बनाने के लिए राज्य सरकार की ओर से निष्क्रियता का मतलब यह नहीं है कि नियोक्ता (उस मामले में विश्वविद्यालय) द्वारा अनुचित श्रम अभ्यास किया गया था और चूंकि कोई पद नहीं थे, इसलिए उच्च न्यायालय के स्थायी होने का दर्जा देने के निर्देश को दरकिनार कर दिया गया था। अदालत ने यह भी देखा कि **महाराष्ट्र राज्य बनाम R.S.Bhonde** (2005) 6 एससीसी 751 में इस कानूनी स्थिति की पुष्टि की गई थी . अदालत ने यह भी दोहराया कि पोस्ट का निर्माण और उन्मूलन और नियमितीकरण विशुद्ध रूप से कार्यकारी कार्य हैं, जैसा कि कई निर्णयों में खा गया है, और यह न्यायालय के लिए नहीं था कि वह पद के निर्माण और श्रमिकों को अवशोषित करने या उन्हें सेवा में जारी रखने या नियमित कर्मचारियों के वेतन का भुगतान करने का निर्देश देकर कार्यकारी या विधानमंडल की शक्ति का अहंकार करे। इस कानूनी स्थिति का सारांश पैरा 41 में दिया गया है जो इस प्रकार हैः

"इस प्रकार**,** इसमें कोई संदेह नहीं है कि पदों का निर्माण न्यायिक कार्यों के दायरे में नहीं है जो स्पष्ट रूप से कार्यकारी से संबंधित है। यह भी सच है कि जहां ऐसे कोई पद मौजूद नहीं हैं स्थायीता का दर्जा अदालत द्वारा नहीं दिया जा सकता है और पदों के निर्माण के संबंध में कार्यकारी कार्यों और शक्तियों को अदालतों द्वारा अतिक्रमण नहीं किया जा

सकता है।“

27. “हालांकि, अदालत ने पाया कि उससे पहले के मामले में तथ्यात्मक स्थिति अलग थी। यहां प्रतिष्ठान में सफाई कर्मचारियों का पद मौजूद था। आगे, तथ्यों की एक खोज दर्ज की गई थी कि निगम ने इन श्रमिकों को अस्थायी/कारण/दैनिक मजदूरी के आधार पर शामिल करके और उन्हें मामूली राशि का भुगतान करके अनुचित श्रम अभ्यास में लिप्त किया था, तब भी जब वे दिन में आठ घंटे के कर्तव्यों का निर्वहन कर रहे थे और नियमित कर्मचारियों के समान कर्तव्यों का पालन कर रहे थे।"

28. इस पृष्ठभूमि में, अदालत की राय थी कि औद्योगिक न्यायालय द्वारा इन कर्मचारियों को उपलपब्ध पदों के विरुद्ध स्थायीकरण प्रदान करने का निर्देश स्पष्ठ रूप से अनुमेय था तथा अधिनियम की धारा 30 (1) (B) के अन्तर्गत आधोगिक/ श्रम न्यायालय को वैधानिक रूप से प्रदत्त शक्तियों के साथ, जो आधोगिक निर्णायक को दोषी कर्मचारियों के विरुद्ध सकारात्मक कार्यवाही करने में सक्षम बनाती है तथा चूँकि ये शक्तियाँ व्यापक आयाम की है, इसलिए स्थायीकरण प्रदान करने का निर्देश इसके दायरे में नहीं आता।

29. इस प्रकार, दोनों मामलों की गहन जांच से पता चलेगा कि उन मामलों में निर्धारित कानून एक-दूसरे के विरोधाभासी नहीं है। *यूपी पावर कॉर्पोरेशन* , में इस न्यायालय ने श्रम न्यायालय की शक्तियों को मान्यता दी है और साथ ही इस बात पर जोर दिया है कि श्रम न्यायालय को यह ध्यान

रखना है कि यदि यह संविधान के Art.14 के प्रावधानों का उल्लंघन करता है, जिस पर *उमा देवी* के मामले में निर्णय मुख्य रूप से आधारित है, तो नियमितीकरण का कोई निर्देश नहीं होना चाहिए। दूसरी ओर, *भोंडे केस* में , न्यायालय ने इस सिद्धांत को मान्यता दी है कि श्रमिकों को कुछ राहत देने के लिए श्रम न्यायालय/औद्योगिक न्यायालय को प्रदत्त वैधानिक शक्तियों को ध्यान में रखते हुए, जिसमें अनुबंध कर्मचारियों को स्थायी का दर्जा देने की राहत शामिल है, *उमादेवी का मामला* इस तरह की वैधानिक शक्ति में निर्णय द्वारा अस्वीकार नहीं की जाती है। इस निर्णय के पढ़ने से यह स्पष्ट है कि इस तरह की शक्ति का प्रयोग तब किया जाना चाहिए जब नियोक्ता ने अस्थायी/दैनिक मजदूरी के आधार पर उपलब्ध होने पर भी स्थायी पद को न भरकर और श्रमिकों को जारी रखते हुए और वही काम उनसे लेकर और उन्हें कुछ उद्देश्य बनाकर अनुचित श्रम अभ्यास में लिप्त किया हो जो नियमित श्रमिकों द्वारा किया गया था लेकिन उन्हें बहुत कम मजदूरी का भुगतान किया जाता था। यह केवल तभी होता है जब एक विशेष एमआरटीपी और पीयूएलपी अधिनियम की अनुसूची IV में उल्लिखित अनुचित श्रम व्यवहार हो और यह उक्त अधिनियम की धारा 30 के तहत निर्देश देने की आवश्यकता है, तब न्यायालय ऐसा निर्देश देगा।

30. हम इस तथ्य से अवगत हैं कि उपरोक्त निर्णय एमआरटीपी और पीयूएलपी अधिनियम के तहत दिया गया है और उस अधिनियम के विशिष्ट प्रावधानों पर विचार किया गया था ताकि उक्त अधिनियम द्वारा औद्योगिक न्यायाधिकरण/श्रम न्यायालय को प्रदत्त शक्तियों का पता लगाया जा सके।" साथ ही, इस बात पर भी जोर देने की आवश्यकता नहीं है कि औद्योगिक विवाद

अधिनियम के तहत औद्योगिक न्यायनिर्णायक की शक्तियां समान रूप से व्यापक हैं। यह अधिनियम औद्योगिक विवादों से संबंधित है, सुलह, निर्णय और निपटान का प्रावधान करता है, और पक्षों के अधिकारों और पुरस्कारों और निपटान के प्रवर्तन को विनियमित करता है। इस प्रकार, अधिनियम के तहत न्यायनिर्णायक अधिकारियों को सशक्त बनाकर, गलत तरीके से बर्खास्त या छुट्टी दिए गए श्रमिकों की बहाली जैसी राहत देना जो सामान्य कानून में स्वीकारीय नहीं हो सकती है या नियोक्ता और ऐसे श्रमिकों के बीच अनुबंध की शर्तों के तहत उचित नहीं हो सकता है, विधायिका ने अनुचित श्रम प्रथाओं को विफल करने और सामूहिक सौदेबाजी की नीति को सुरक्षित करने का प्रयास किया है जो कि औद्योगिक शांति की और ले जाती है।

31. जस्टिस कृष्ण अय्यर की भाषा में: "

> औद्योगिक विवाद अधिनियम एक सौम्य उपाय है, जो औद्योगिक तनाव को पहले से दूर करना चाहता है, विवाद के यांत्रिकी प्रदान करना, समाधान और आवश्यक बुनियादी ढांचे की स्थापना करना, ताकि उत्पादन में भागीदारों की ऊर्जा को प्रति-उत्पादक लड़ाइयों में नष्ट न किया जा सके और औद्योगिक न्याय का आश्वासन सद्भावना का माहौल बना सके। (लाइफ इंश्योरेंस कॉर्प. ऑफ इंडिया बनाम D. J बहादुर 1980 लैब आईसी 1218, 1226 (SCC), प्रति कृष्णा अय्यर, जे.)।

उपरोक्त उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए, श्रम न्यायालयों/औद्योगिक न्यायाधिकरणों को न केवल अधिकारों को लागू करने के लिए बल्कि सामाजिक न्याय प्राप्त करने के अंतर्निहित उद्देश्य के साथ नए अधिकार बनाने के लिए भी व्यापक शक्तियां दी जाती हैं। वर्ष 1950 में, यानी औद्योगिक विवाद अधिनियम के अधिनियमन के तुरंत बाद, भारत बैंक लिमिटेड के मामले में अपने पहले और प्रसिद्ध निर्णयों में से एक में [1950] एलएलजे 921,948-49 (एससी) इस पहलू को न्यायालय द्वारा निम्नलिखित टिप्पणी करते हुए उजागर किया गया थाः

नियोक्ताओं और श्रमिकों के बीच विवादों को निपटाने में, न्यायाधिकरण का कार्य कानून के अनुसार न्याय के प्रशासन तक सीमित नहीं है। यह किसी भी पक्ष पर अधिकार और विशेषाधिकार प्रदान कर सकता है जिन्हें वह उचित और उचित मानता है, भले ही वे किसी मौजूदा समझौते की शर्तों के भीतर नहीं हो सकते हैं। यह केवल पार्टियों के संविदात्मक अधिकारों और दायित्वों की व्याख्या या प्रभाव देने के लिए नहीं है। यह उनके बीच नए अधिकार और दायित्व पैदा कर सकता है जिसे वह औद्योगिक शांति बनाए रखने के लिए आवश्यक मानता है।

32. साथ ही, ट्रिब्यूनल को दी गई उपरोक्त व्यापक शक्ति बेलगाम नहीं है और इस अदालत द्वारा न्यू मैनकचॉक स्पिनिंग एंड वीविंग Co.Ltd.vs टेक्सटाइल लेबर एसोसिएशन [1961] 1 एलएलजे 521,526 (एससी), के मामले में निम्नलिखित शब्दों में सीमित है।

हालांकि, इसका मतलब यह नहीं है कि औद्योगिक विवाद से निपटने के दौरान एक औद्योगिक अदालत कुछ भी और सब कुछ कर सकती है। यह शक्ति उस विषय से संबंधित है जिसके साथ यह काम कर रहा है और मौजूदा औद्योगिक कानून द्वारा भी और यह इसके समक्ष किसी विशेष मामले से निपटने के दौरान विधायिका या इस न्यायालय द्वारा निर्धारित मामले से संबंधित औद्योगिक कानून की अनदेखी करने के लिए अनुमति नहीं होगा।

33. इस प्रकार, यह अच्छा संतुलन है जिसे किसी विशेष विवाद पर निर्णय लेते समय प्राप्त करना आवश्यक है, यह ध्यान में रखते हुए कि औद्योगिक विवादों का निपटारा निष्पक्ष और न्याय के सिद्धांत पर औद्योगिक निर्णय द्वारा किया जाता है।

34. ऊपर विस्तार से चर्चा किए गए दो निर्णयों के सामंजस्यपूर्ण अध्ययन पर, हमारी राय है कि जब पोस्ट उपलब्ध हों, किसी भी अनुचित श्रम अभ्यास के अभाव में श्रम न्यायालय नियमितकरण के लिए केवल इसलिए निर्देश नहीं देगा क्योंकि एक कर्मचारी कई वर्षों तक दैनिक वेतनभोगी कार्यकर्ता/तदर्थ/अस्थायी कार्यकर्ता के रूप में जारी रहा है। इसके अलावा, अगर कोई पद उपलब्ध नहीं हैं, तो नियमितीकरण के लिए इस तरह के निर्देश की अनुमति नहीं होगी । उपरोक्त परिस्थितियों में ऐसे व्यक्ति को नियमित करने का निर्देश देना, केवल दैनिक मजदूरी आदि जैसे ऐसे कार्यकर्ता द्वारा लगाए गए वर्षों की संख्या के आधार पर सेवा में पिछले दरवाजे से प्रवेश के बराबर हो सकता है जो संविधान के Art.14 के लिए एक अभिशाप है। इसके अलावा, ऐसा निर्देश

तब नहीं दिया जाएगा जब संबंधित कार्यकर्ता भर्ती नियमों के अनुसार संबंधित पद की पात्रता आवश्यकता को पूरा नहीं करता है। हालांकि, जहां भी यह पाया जाता है कि समान रूप से स्थित श्रमिकों को नियोक्ता द्वारा स्वयं किसी योजना के तहत या अन्यथा नियमित किया जाता है और संबंधित विचाराधीन श्रमिक जिन्होंने आदोग्यिक / श्रम न्यायालय का दरवाज़ा खटखटाया है। ऐसे मामलों में नियमित करने का निर्देश कानूनी रूप से उचित हो सकता है, अन्यथा, बचे हुए श्रमिकों का नियमित न होना ऐसे मामलों में उनके साथ अनुचित भेदभाव के बराबर होगा और यह संविधान के Art.14 का उल्लंघन होगा। इस प्रकार, औद्योगिक न्यायनिर्णायक कला को बनाए रखते हुए Art.14 को क़ायम रखकर समानता प्राप्त करेगा, इस संवैधानिक प्रावधान का उल्लंघन करने के बजाय।

35. उपरोक्त उदाहरण केवल सचित्र हैं। यह प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करेगा कि क्या न्याय को आगे बढ़ाने के लिए नियमितीकरण का आदेश आवश्यक है या अगर ऐसा निर्देश देना नियोक्ता के अधिकारों का उल्लंघन करता है तो इसे अस्वीकार करना होगा ।

36. उपरोक्त पृष्ठभूमि में, हम वर्तमान मामले के तथ्यों को वापस लाते हैं। अपीलकर्ताओं की शिकायत यह थी कि सर्कुलर दिनांक 6.5.1997 में निहित योजना के तहत इसी तरह से तैनात कई श्रमिकों को नियमित किया गया है और इसलिए, वे भी इस लाभ के हकदार थे। यह तर्क दिया जाता है कि जिन्होंने 240 दिनों की सेवा की थी, उस योजना/परिपत्र दिनांक 6.5.1987 के प्रावधान के अनुसार नियमित किया गया था।

37. हमारे सामने के मामलों पर विचार करने पर हम पाते हैं कि अपीलकर्ता नंबर 1 उस तारीख को सेवा में नहीं था जब योजना घोषित की गई थी। यानी 06.05.1987 के रूप में, क्योंकि उस परिपत्र के प्रकाशित होने से 4 साल पहले उनकी सेवाओं को वितरित किया गया था. इसलिए, हमारे विचार में, बहाली के बदले मौद्रिक मुआवजे की राहत उनके मामले में अधिक उचित होगी और विवादित निर्णय में निष्कर्ष उसके लिए अनुपलब्ध है, हालांकि कठिन कारणों से (जैसा कि हमने ऊपर दर्ज किया है), उन लोगों की तुलना में जो उच्च न्यायालय द्वारा पेश किए गए थे। हालांकि, जहां तक अपीलकर्ता नंबर 2 का सवाल है, वह 05.09.1986 से काम कर रहा था, और 15.09.1990 तक सेवा में रहा जब तक कि उसकी सेवाएं समाप्त नहीं हो गईं। उन्होंने इसके तुरंत बाद औद्योगिक विवाद भी उठाया। इस प्रकार, जब 5.9.1987 दिनांकित परिपत्र जारी किया गया था, तो वह सेवा में थे और उस परिपत्र के जारी होने के कुछ महीनों के भीतर उन्होंने 240 दिनों की सेवा पूरी कर ली थी।

38. इसलिए, अन्य समान स्थित कर्मचारियों को उस परिपत्र दिनांक 6.5.1987 का लाभ देते समय और उन्हें नियमित करते समय, अपीलकर्ता संख्या 2 का अनियमितकरण स्पष्ट रूप से भेदभावपूर्ण होगा। इन तथ्यों पर, सी. जी. आई. टी. ने सही माना कि वह परिपत्र दिनांक 06.05.1987 में निहित योजना के लाभ के हकदार थे। डिवीजन बेंच ने विवादित फैसले में इस प्रासंगिक और भौतिक तथ्य पर ध्यान देने में विफल रहा जो अपीलकर्ता संख्या 2 के पक्ष में तराज़ू को मोड़ देती है। उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी नंबर 2 को 50 प्रतिशत वापस मजदूरी के

साथ बहाल करने और उसे सेवा में नियमित करने के लिए सी. जी. आई. टी. द्वारा दिए गए निर्देश को उलटने में गलती की, जिसकी विद्वान एकल न्यायाधीश ने भी सही पुष्टि की थी। वह उस परिपत्र के संदर्भ में अपने मामले पर विचार करने का हकदार था। अगर ऐसा किया जाता, तो शायद उसे नियमित कर दिया जाता। इसके बजाय, वर्ष 1990 में उनकी सेवाओं को गलत तरीके से और अवैध रूप से समाप्त कर दिया गया था, उपरोक्त चर्चा के परिणाम के रूप में, हम इन अपीलों को आंशिक रूप से अनुमति देते हैं। अपीलकर्ता नंबर 1 के संबंध में अपील को ख़ारिज करते है। जहां तक अपीलकर्ता नंबर 2 का संबंध है, उसको स्वीकार किया जाता है। उनके मामले में, डिवीजन बेंच के फैसले को दरकिनार कर दिया जाता है और सी. जी. आई. टी. के फैसले को बहाल किया जाता है। हालांकि, लागत के बारे में कोई आदेश नहीं होगा।

जे.

(के एस राधाकृष्णन)

यह अनुवाद पीयूष आनन्द, पैनल अनुवादक के द्वारा किया गया है।